अध्याय प्रथम

1. छत्तीसगढ़ राज्य की पृष्ठभूमि
1.1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
1.2. छत्तीसगढ़ राज्य का प्राचीन आधार कल्चुरि काल तक
1.3. मराठा एवं ब्रिटिश काल में छत्तीसगढ़ राज्य की प्रामाणिकता
1.4. भाषा तथा साहित्य में छत्तीसगढ़
1.5. पृथक संस्कृति

अध्याय : प्रथम

1.1 छत्तीसगढ़ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

शांत एवं अहिंसक संघर्ष के एक लंबे दौर के पश्चात छत्तीसगढ़ राज्य इतिहास की नयी यात्रा शुरू कर चुका है। 1 नवम्बर 2000 को छत्तीसगढ़ भारतीय गणतंत्र का 26 वाँ राज्य बन गया। भारत के राजनीतिक मानचित्र में छत्तीसगढ़ को पृथक राज्य के रूप में पहचान भले ही एक अरसे के बाद मिली हो किंतु पुरातात्त्विक साक्ष्यों से पता चलता है कि अंचल ने प्रारंभिक मानव सभ्यता के विकास का दौर देखा है और इसके सबूत हैं वे पुरा पाषाण काल के औजार जो महानदी घाटी तथा रायगढ़ जिले के सिंधनपुर आदि क्षेत्रों में प्राप्त हुए हैं।

वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्य प्राचीन काल में दक्षिण कोसल के नाम से सुविख्यात था।[1] दक्षिण कोसल का प्रागैतिहासिक काल तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। (1) पूर्व पाषाण काल (2) मध्य पाषाण काल (3) उत्तर पाषाण काल। पूर्व पाषाण काल के लम्बे पलक, अर्थचन्द्रकार, लघु पाषाण काल के औजार महानदी घाटी क्षेत्र मध्य पाषाण काल के पुरातात्त्विक अवशेष रायगढ़ जिले के कबरा पहाड़ तथा उत्तर पाषाण युग के लघुकृत पाषाण औजार महानदी घाटी, बिलासपुर जिले के धनपुर तथा रायगढ़ जिले के सिंघनपुर के चित्रित शैल गृहों के निकट से प्राप्त हुए हैं।[2] इसके पश्चात् नव पाषाण युग के छिद्रित धन जैसे औजार दुर्ग जिले के अर्जुनी व नांदगांव जिला तथा रायगढ़ के टेरम नामक स्थानों में प्राप्त हुए हैं। इस युग में मानव सभ्यता का विकास हो चुका था और मानव ने कृषि, पशु पालन, गृह निर्माण, तथा बर्तनों को बनाने आदि को कार्य प्रारंभ कर दिया था।[3]

पाषाण काल के पश्चात् मानव सभ्यता ने क्रमशः ताम्र और लौह युग में प्रवेश किया। इन युगों के अनेक उपकरण धमतरी तथा बालोद जिलों के विभिन्न क्षेत्रों में प्राप्त हुए हैं। औजारों और उपकरणों के साथ ही छत्तीसगढ़ के सिंधनपुर, कबरा पहाड़, करमागढ़, ओंगना, बसनाभाट, खैरपुर, नवागढ़, हरदुला, उल्फागढ़, गुदाहांडी, बीजापुरख विक्रमखोल, जोगीगढ़, डोंगर तथा जोगाभाड़ा की गुफाओं के साथ अनेक स्थानों में प्राप्त भीतिचित्र प्रागैतिहासिक काल के मानव की कलात्मक अभिरूचि और प्रतिभा के उत्तम निदर्शन है।[4] शिकार की पृष्ठभूमि पर आधारित अधिकांश चित्र इनके जीवन के प्रति बिम्ब थे।[5] ये शैल चित्र जिन्हें बीस हजार से पचास हजार से भी पूर्व का अनुमान किया जाता है छत्तीसगढ़ अंचल में मानवीय सभ्यता के विकास के प्रथम चरण की ओर संकेत करते हैं।[6]

---

1. डॉ. पी. एल. मिश्रा, लेख, **'छत्तीसगढ़ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि'**, पेज 13
2. **छत्तीसगढ़ मंथन**, लेख, 'छत्तीसगढ़ का प्रागैतिहासिक काल, 2001, पेज 5
3. डॉ. भगवानसिंह वर्मा, **'छत्तीसगढ का इतिहास'**, पेज 288
4. हीरालाल शुक्ल, **'छत्तीसगढ ज्ञानकोष'**, 2004 पेज 298
5. बालचन्द्र जैन, **'शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ'**, इतिहास खंड, पेज 6
6. प्यारे लाल गुप्त, **'प्राचीन छत्तीसगढ'**, 1973, पेज 8

छत्तीसगढ़ की जीवन दायिनी महानदी के तट पर बसे ग्राम बालपुर के निकट रोमन तथा भिन्न भिन्न समय की गुफाऐं एवं अन्य वस्तुएँ प्राप्त हुई है। आश्चर्य नहीं कि महानदी के गर्भ में प्रागैतिहासिक काल की बहुत सी वस्तुएँ समा गई हों। छत्तीसगढ़ की उत्तर पश्चिमी सीमा पर स्थित बालाघाट जिले के गंगरिया नामक गांव में औजारों का एक बहुत बड़ा संग्रह सन् 1870 में प्राप्त हुआ। इसी स्थान पर खुदाई करने से 424 तांबे के औजार तथा 102 चाँदी के आभूषण प्राप्त हुए जिनका वजन क्रमशः 36 मन तथा लगभग 1 सेर था। अधिकांश विशेषज्ञो की राय में ये वस्तुएँ प्रागैतिहासिक काल की हो सकती है।[7]

प्रसिद्ध पुरातत्त्वज्ञ डॉ. हंसमुख सांकलिया इस सन्दर्भ में लिखते हैं – वस्तुतः यदि भारत में आदि मानव के कोई शारीरिक अवशेष प्राप्त होने के आशा है तो वह केवल नर्मदा नदी पर ही। होशंगाबाद–नरसिंगपुर के बीच न केवल हजारों पाषाण के औजार प्राप्त हुए हैं बल्कि पशुओं तक की हड्डियाँ तथा अवशेष मिले हैं जो आज पृथ्वी पर कहीं नहीं मिलते ....। "स्मरण रहे कि नर्मदा नदी छत्तीसगढ़ के अन्तर्गत बिलासपुर जिलें की उत्तर सीमा में स्थित अमरकंटक से निकली है और उस समय के बने हुए औजार अधिकतर नदी तटों में ही प्राप्त होते हैं विशेषकर नर्मदा घाटी में प्राप्त ऐसे औजारों की संख्या बहुत अधिक है, अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि मध्य भारत का पाषाण युगीन मानव, अन्य प्रदेशों के मानव की भाँति नदी तट पर ही निवास स्थान बनाना अधिक पसंद करता था।[8] अतः इस संबंध के प्रसिद्ध पुरातत्वज्ञ पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय का कथन अत्यंत उल्लेखनीय है वे लिखते हैं – "यदि कहा जाये कि वर्तमान छत्तीसगढ़ अर्थात महा कोसल मनुष्य जाति की सभ्यता का जन्म स्थान है तो अतिश्योक्ति नहीं होगी .... मानव जाति की आदि सभ्यता यहीं पली थी।[9]

ऐतिहासिक श्रोत बताते है कि ऋग्वेदिक काल से ही छत्तीसगढ़ में आर्यो का प्रवेश हो चुका था। इस संबंध में डॉ. एस.एन. प्रधान की खोज अत्यंत महत्त्वपूर्ण तथा ठोस प्रमाणों पर आधारित है। उनके अनुसार दक्षिण कोसल, चेदी, दसारन, निषाध विदर्भ जो विंध्याचल के आसपास बसे थे, ये सब ऋग्वेदिक वसाहत (Colonice) थे। उनका कहना है कि ऋग्वेदिक वेद में जिन चेदियों का उल्लेख हैं उन्हें महाभारत में वर्णित चेदियों से संबंधित नलोपख्यानं से जोड़कर देखे तो यह स्पष्ट होगा कि मध्य ऋग्वेदिक काल में आर्यो की बस्तियाँ बस चुकी थी।[10] वे कहते हैं कि ऋग्वेद में वर्णित मुद्गल ऋषि की पत्नी इन्द्रसेना थी, जो महाभारत में उल्लेखित राजा नल की पत्नी दमयंती से प्राप्त पुत्री थी। शतपथ ब्राम्हण से भी यह स्पष्ट होता है कि इन्द्रसेना के पिता विख्यात राजा नल थे जो

---

7. बालचन्द्र जैन, **'उत्कीर्ण लेख'**, पेज 1
8. प्रयागदत्त शुक्ल, **'सतपुड़ा की सभ्यता'**, 1953 पेज 16
9. प्यारे लाल गुप्त, सम्पादक, **'विष्णु यज्ञ स्मारक ग्रंथ,'** रतनपुर, पेज 76
10. डॉ. एस.एन. प्रधान, **क्रॉनॉलॉजी ऑफ एंशियेट इंडिया**, पेज 202

प्राचीन दक्षिण कोसल क्षेत्र का मानचित्र
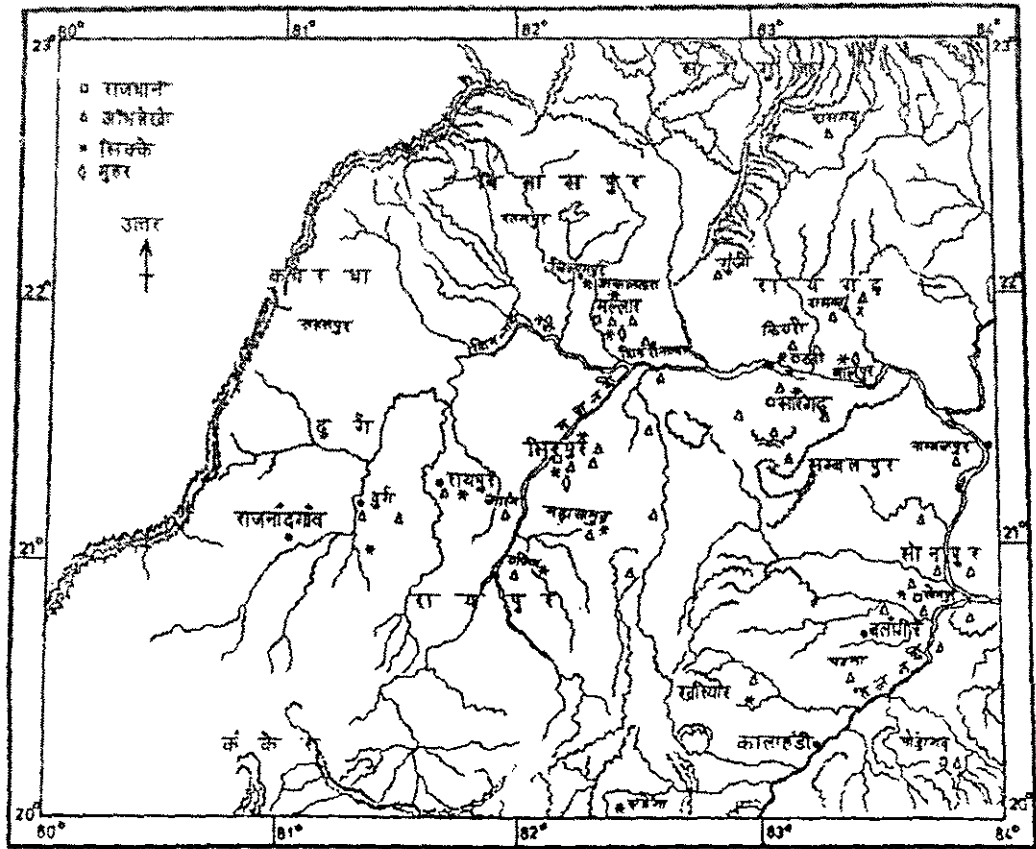
मानचित्र क्र. : 1

निशाधिपति थे और यह निशाध राज्य विध्यांचल के दक्षिण में बसा था। जो ऋग्वेद में वर्णित मुदगल ऋषि के पिता थे, वे राजा नल के मित्र ऋतुपर्ण, ऐश्वाक के समाकलीन थे। डॉ. प्रधान ने यह सिद्ध करने का सफल प्रयास किया है कि ऋतुपर्ण का कोसल राज्य दक्षिण कोसल ही था जहाँ से ऋतुपर्ण ने पड़ोसी राज्य विदर्भ की यात्रा 11 घण्टों में पूर्ण की थी।[11] बालचंद जैन ही इस संबंध में लिखते हैं कि उपनिषद काल तक नर्मदा के पास पड़ोस के प्रदेश और विदर्भ तक आर्यो का विस्तार हो चुका था।[12]

भारत के प्राचीनतम ग्रंथ वाल्मिकी –रामायण में दो कोसल का उल्लेख है उत्तर कोसल तथा दक्षिण कोसल। पुराणों में दक्षिण कोसल की वंशावली भी दी गई है। वास्तव में कोसल देश इतना विस्तृत और महान था कि उसे सात खण्डों में विभाजित करने की आवश्यकता पड़ गई थी जिसका उल्लेख वायु पुराण में हैं। इन सात खण्डों के नाम इस प्रकार है – (1) मेकल कोसल (2) क्रांति कोसल (3) चेदि कोसल, (4) दक्षिण कोसल (5) काशि कोसल (6) पूर्व कोसल और (7) कलिंग कोसल। तथापि वाल्मिकी रामायण में दो ही कोसल का उल्लेख मिलता है। उत्तर कोसल महाजनपद सरयूतट पर विस्तृत रूप से फैला हुआ था। जबकि दक्षिण कोसल विध्यांचल पर्वतमाला के दक्षिण में स्थित था। इसी दक्षिण कोसल की राजकुमारी कौशल्या उत्तर कोसल के राजा महाराज दशरथ को ब्याही गई थी। अंचल के बिलासपुर जिलें में कोसल नामक एक बड़ा सा ग्राम आज भी है।[13] रामायण के अनुसार दण्डाकारण्य में ही श्रीराम के लोकोधार संबंधी कार्यो की नींव पड़ी। कतिपय विद्वान वर्तमान अमरकंटक में लंका की स्थिति भी मानते हैं।[14]

रामायण युग में यह क्षेत्र जिस प्रकार दक्षिण कोसल के नाम से प्रसिद्ध था, उसी प्रकार महाभारत कालीन युग में यही क्षेत्र चेदि जनपद के नाम से जाना जाता था। इसी प्रकार अंचल का एक भूखण्ड बस्तर भूभाग उस समय रामायण कालीन महाकांतार के स्थान पर कांतार शब्द से जाना जाता था। जैसे कि महाभारत के इस पद्यांश से संकेत मिलता है।

स विजित्स दूराधर्म भीष्मकं माद्रि नन्दनः

कौशलाधिपति चैव तथा वैणतरा धियं।।

कांतार काश्य समरे तथा प्राक कौशलनृपान,

नाटके यांश्च समरे यथा हेरम्ब कान् युधि।।

महाभारत में चेदि नरेश शिशुपाल का वर्णन मिलता है जिसका वध श्रीकृष्ण द्वारा हुआ था। ऐसी भी किवंदती है कि चेदि देश का राजा बभ्रुवाहन पाण्डव वंशी

---

11. डा. पी. एल. मिश्रा, **'दक्षिण कौसल का प्राचीन इतिहास'**, 2003, पेज 25
12. बालचंद जैन, **'शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ'**, इतिहास खण्ड, 1955, पेज 8
13. प्यारे लाल गुप्त, **'प्राचीन छत्तीसगढ़'**, 1973, पेज 33
14. रायबाहदुर हीरालाल, **'म.प्र. का इतिहास'**, 1917, पेज 3

अर्जुन का पुत्र था जिसक राजधानी चित्रांगदपुर थी जो वर्तमान में रायपुर जिले में स्थित सिरपुर के नाम से प्रसिद्ध है।[15] इसी प्रकार राजा मयूरछाज की राजधानी रत्नपुर (वर्तमान आरंग) के संबंध में भी जनजीवन में किवंदतियाँ प्रचलित है। यद्यपि प्रामाणिक ऐतिहासिक जानकारी का अभाव है।[16] अंचल के तीन प्रमुख क्षेत्र सिरपुर, आरंग, तथा रतनपुर में प्राप्त साक्ष्य महाभारत कालीन परिवेश के तथ्यों को उजागर करने में सक्षम है। चेदि देश की प्राकृतिक सुषमा एवं यहाँ के निवासियों के सद्गुणों का वर्णन स्तुवन के रूप में किया गया है यथा–

स्र चेदि विषय रम्यं वसु पौरवनन्दनः

इन्द्रो प्रदेशाज्जग्राह रमणीय महीपतिः

पाशवयश्चैव पुण्यश्च प्रभूत धन धान्यवान्।

यज्जाते धुरिनो गाश्चकृशानु संधुक्ष यंति च ।

सर्वे पर्णसधर्मस्थाः सदा चेदिषु मानद।। (महाभारत आदिपर्व)

इसी तरह राज्य के अनेक प्राकृतिक उपक्रमों का उल्लेख इस महाकाव्य में सहज ही प्राप्त होता है यथा महानदी को चित्रोत्पला,[17] पैरी नदी को जोंक नदी तथा वन पर्व में अमरकंटक को वंशगुल्म कहा गया है।

महाभारत की तरह पुराणों में भी छत्तीसगढ़ के प्रमुख नगरों, पर्वतों, नदी तथा राजवंशों का उल्लेख मिलता है। जैमिनी पुराण में राजा मयूरध्वज की वंशावली का उल्लेख प्राप्त होता है तो वही पद्म पुराण में ऋषभ तीर्थ और ब्रम्ह पुराण में श्रृंगतीर्थ का महात्म्य वर्णित है। महानदी, शिवनाथ नदियों का उल्लेख वामन पुराण, ब्रह्म पुराण, मत्स्थ पुराण में प्राप्त होता है। इसी तरह अमरकंटक को पद्म पुराण में उमा व महेश्वर का निवास स्थान कहा गया है कुछ पुराणों में ऋक्षपाद और मेकल भी कहा गया है।[18]

1.2 छत्तीसगढ़ राज्य का प्राचीन आधार कल्चुरी काल तक :–

यद्यपि पुराणों में दक्षिण कोसल के अनेक राजाओं का उल्लेख प्राप्त होता है किंतु इसके बावजूद क्षेत्रीय इतिहास की निरन्तरता स्थापित नहीं होती। चीनी यात्री व्हेनसांग के यात्रा विवरणों से यह तथ्य स्थापित होता है कि मौर्य सम्राट अशोक छत्तीसगढ़ क्षेत्र से होकर ही दक्षिण गये होंगे और तभी उन्हें दक्षिण कोसल की राजधानी में स्तूप तथा अन्य प्रासादों के निर्माण का अवसर प्राप्त हुआ। इस काल में सिरपुर और भाण्डक में बौद्ध धर्मावलंबी स्वतंत्र क्षत्रिय नरेशों के शासित होने संबंधी जानकारी मिलती है। यह

---

15. प्यारेलाल गुप्त, – **'प्राचीन छत्तीसगढ़'**,1973, पेज 34
16. प्रो. रमेन्द्रनाथ मिश्र, – **'छत्तीसगढ का इतिहास'**, पेज 23
17. उत्पलेशं समा साथ यावच्चिज्ञा महेश्वरी। चित्रोत्पला कथिता सर्व पाद प्रणाशिनी।
18. मन्मथलाल गुप्त – **'छत्तीसगढ दिग्दर्शन'**, 1996, पेज 29

भाण्डक या भद्रावती चांदा के समीप है और तत्कालीन वाकाटक वंश की राजधानी थी।[19] अशोक के समय के धर्म लेख सरगुजा जिले के रामगढ़ की सीताबोंगरा और जोगीमारा नामक गुफाओं में पाए गए हैं। अनेक विद्वानों को मत है कि मेघदूत में कालिदास वर्णित रामगिरी, रामगढ़ पहाड़ी ही है। सीताबोंगरा के प्रवेश द्वार के उत्तरी भाग में गुफा के छत के नीचे पाली भाषा में लिखी पक्तियाँ उत्कीर्ण है –

"आदि पयंति हदयं। सभावगरू कवयो ये रातय .....
दूले अबसंतिया। हासावनु भूते। कुदस्वीतं एवं अलगैति।[20]

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि यह गुफा सांस्कृतिक एवं कलात्मक आयोजनों का रंगमंच था। ग्रीक थियेटर के आकार की बनी गुफा की आंतरिक सुव्यवस्था देखकर यह एशिया की सबसे प्राचीन नाट्यशाला कही जा सकती है।[21]

इसी प्रकार नंद मौर्य काल के चाँदी के सिक्के रायपुर जिले क तारापुर में तथा रायगढ और बिलासपुर जिले में अकलतरा के आसपास बड़ी संख्या में प्राप्त हुए हैं। इन सिक्कों मे ठठारी ग्राम में पाये गये सिक्के महत्त्वपूर्ण रूपभाषक सिक्के हैं।

मौर्य साम्राज्य के पतन के साथ ही इतिहास में चार नये राजवंशो का उदय हुआ। मगध पर शुंग, कलिग में चेदि, पश्चिमोत्तर क्षेत्र में यूनानी और दक्षिणापथ पर सातवाहन वंश ने अधिकार स्थापित किया।

(शुड्ग और खारवेल वंश) अंतिम मौर्य सम्राट वृहस्थ (183 ई – 153 ई) को मरवाकर शुंगवंशीय सेना पति पुष्पमित्र ने सत्ता पर अधिकार कर वैदिक धर्म को पुनः प्रतिष्ठित करते हुए "विक्रमादित्य" की उपाधि धारण की शुंग सत्ता पर दो बाहरी आक्रमणों के उल्लेख मिलते हैं जिनमे प्रथम, यूनानी शासक मीनेन्डर ई. पू. 155 में किया गया आक्रमण जिसे पुष्यमित्र शुंग ने मथुरा के निकट बूरी तरह परास्त किया और दूसरा आक्रमण कंलिग राजा खारवेल द्वारा किया गया। खारवेल वास्तव में चेदिवंश का था। खारवेल शासक हाथियों पर सवार होकर निकलते थे इसिलिये इन्हें मेधवाहन कहा जाता था। दीर्घकाल तक कोसल क्षेत्र पर शासन करने वाले, जैन धर्म के अनुयायी खारवेल का शासनकाल बड़ा प्रशंसनीय रहा।[22] सातवाहन वंश के 30 शासकों ने लगभग 400 वर्षों तक (ईसापूर्व 200 से 200 ई) शासन किया।[23] इस वंश का प्रतापी शासक सातकर्णि प्रथम था जिसके शासनकाल में सातवाहन सत्ता का विस्तार त्रिपुरी तक था। सातकर्णि प्रथम तथा गौतमी पुत्र सातकर्णि के बीच में होने वाले राजाओं में एक राजा अपीलक नाम का था जिसके ताँबे के सिक्के

---

19. ज्वाला प्रसाद मिश्र, **'विष्णुयज्ञ स्मारक ग्रंथ'** , पेज 87
20. पंडित लोचन प्रसाद पाण्डे कोसल प्रशस्ति **'रत्नावली'**, पेज 02
21. प्यारे लाल गुप्त – **'प्राचीन छत्तीसगढ'** 1973 पेज 23
22. प्रयागदत्त शुक्ल **'सतपुड़ा की सभ्यता'**, पेज 5 1953 नागपुर
23. पंडित शिवदत्त शास्त्री गौरहा, **'रतनपुर इतिहास समुच्चय'**,

बिलासपुर जिले के बालपुर के निकट महानदी के रेत मे पाये गये हैं।[24] प्रसिद्ध चीनी तीर्थ यात्री व्हेनसांग ने अपेन यात्रा विवरण में सदाह नामक सातवाहन राजा का उल्लेख किया है। वे यह भी लिखते हैं कि प्रसिद्ध बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन दक्षिण कोसल की राजधानी के समीप स्थित विहार में निवास करते थे तथा नागार्जुन के कारण चीन तथा सिंहल द्वीप में भी कोसल का नाम विख्यात था।

बिलासपुर जिले के सक्ती तहसील में गुंजी ग्राम के निकट दामदहरा क्षेत्र में प्राकृतभाषा में उत्कीर्ण राजा कुमार वैरदत्त का दान पत्र, इसी जिले के विविध क्षेत्रों में प्राप्त सातवाहन कालीन पाषाण प्रतिमाएँ तथा किरारी ग्राम में स्थित तालाब में प्राप्त अद्वितीय यज्ञ स्तंभ, स्थान–स्थान पर प्राप्त तांबे के सिक्के आदि ये स्पष्ट करते हैं कि दिर्घकाल तक सातवाहन राजाओं ने दक्षिण कोसल पर शासन किया।

इसी प्रकार कुषाण राजाओं के सिक्के भी बिलासपुर जिले में प्राप्त हुए हैं। इससे यह अनुमान होता है कि कुषाण राज्य का विस्तार भी छत्तीसगढ़ तक अवश्य रहा होगा, भले ही वह अल्पकालीन रहा हो।[25]

तीसरी शदी का प्रारंभ कुषाणों के पतन एवं वाकाटकों की शक्ति स्थापना का संदेश लेकर आया। इस वंश की स्थापना 'वाकार' ग्राम (ओरछा राज्य) में विंध्यशक्ति नामक नरेश ने की और राज्य विस्तार करते हुए वह नागपुर के समीपवर्ती प्रदेशों तक आ पहुँचा जहाँ उसके 'पूरिका' में अपनी राजधानी की स्थापना की। विध्यंशक्ति की तरह उसके प्रतापी पुत्र प्रवर सेन ने राज्य का विस्तार किया और वर्तमान छत्तीसगढ़ सहित बुंदेल खण्ड एवं आंध्र प्रदेश तक फैल गया।[26] प्रवर सेन प्रथम के पश्चात् दक्षिण कोसल अनेक प्रयासों के बावजूद वाकाटक नरेशों के आधिपत्य में नहीं आ सका। राजिम और अडभार में मिले ताम्र पत्रों से वाकाटकों से संबंधित विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

गुप्तवंश का काल ईसा की चौथी शताब्दी माना जाता है। गुप्त शासकों में प्रतापी राजा चन्द्रगुप्त उसके पुत्र 'काचगुप्त' एवं फिर 'समुद्रगुप्त' की प्रशस्ति से संबंधित अनेक सिक्के रायपुर, दुर्ग एवं बस्तर जिले में प्राप्त हुए हैं। ये सिक्के अधिकतर स्वर्ण के हैं। समुद्रगुप्त ने समस्त आर्यावर्त के राजाओं को जीतने की आकांक्षा से जब दक्षिणापथ की ससैन्य यात्रा कर उसे विजीत किया उन दिनों दक्षिण कोसल दो भागों में विभाजित था। उत्तरी भाग सिरपुर का राजा महेंन्द्रादित्य तथा दक्षिण भाग जो महाकांतार के नाम से प्रसिद्ध था व्याध्रराज द्वारा शासित था। एरन में समुद्रगुप्त का एक खंडित शिलालेख प्राप्त होता हैं यह माना जाता है कि राजिम स्थित स्वर्णतीर्थ के तट पर स्वर्णेश्वर महादेव का इसी समय निर्माण कराया गया था। राजिम की प्राचीनता गुप्त कालीन अवशेष से आबद्ध है।[27] इसी

---

24. **'जनरल आफ न्यूस्मेटिक सोसायटी'**, भाग 7
25. प्यारे लाल गुप्त, **'प्राचीन छत्तीसगढ'**, 1973, पेज 48
26. 'जॉन फेथफुल फ्लीट कापर्स, **'इंस्क्रिप्शन्स इंडिकेरम'**, पेज 20
27. मन्मथलाल गुप्त – **'छत्तीसगढ दिग्दर्शन'**, 1996, पेज 32

प्रकार कवर्धा के मोती महल तथा भोरमदेव के निकट प्राप्त शिलादेव, सिरपुर तथा मल्हार में गुप्तकालीन मूर्तियाँ, स्वर्णमुद्रायों से अनुमान लगाया जाता है कि गुप्त वंशीय राजाओं का शासन पूर्ण छत्तीसगढ़ मे व्याप्त था तथा हूणों के लगातार आक्रमणों के बावजूद 510 ई. तक गुप्त शासकों का इस क्षेत्र पर प्रभाव बना रहा।[28]

रायपुर जिले के आरंग नामक स्थान से प्राप्त भीमसेन द्वितीयक के ताम्र पत्रों से ज्ञात होता है कि ईसा की पाँचवी शताब्दी में दक्षिण कोसल में राजर्षि तुल्य नामक राजवंश का शासन था।[29] आरंग ताम्र पत्र के अनुसार इस वंश में क्रमशः महाराजा शूर दमित वर्मा, विभीषण, भीमसेन प्रथम, दमितवर्मा द्वितीय, और अंत मे भीमसेन द्वितीय का शासन था। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि उड़ीसा प्रशस्ति में कलिंग खारवेल के लिये 'राजर्षि वंश तुल्य कुल बिनसृत' लिखा है। संभवतः खारवेल भी राजार्षितुल्य कुल का था।

अनुमानतः ईसा की तीसरी से पाँचवीं शताब्दी तक शासन करने वाले नलवंश से संबंधित उत्कीर्ण लेख उड़ीसा के कोरापुर बरार एवं रायपुर जिले में तथा नलवंशीय स्वर्ण मुद्राएँ बस्तर में प्राप्त हुई हैं।[30] कोरापुर के लेख में अर्थपति महारक एवं भवदत्त वर्मन का उल्लेख प्राप्त होता है। भवदत्त वर्मन के पुत्र स्कंदवर्मन द्वारा नलवंश की पुर्नस्थापना एवं बस्तर के पुष्करी (भोपालपट्नम) को राजधानी बनाने का उल्लेख प्राप्त होता है।[31] स्कन्द वर्मन विस्तारवादी व पराक्रमी शासक था। इस वंश का चौथा शिलालेख सन् 700 ई. के राजिम के राजीवलोचन मंदिर में लगा हुआ है। संभवतः बिलासतुंग इस वंश का अंतिम शासक था।

इतिहासकारों के मतानुसार पाँचवी शताब्दी के अंत से सातवीं शताब्दी तक इस क्षेत्र पर गंगवंश का आधिपत्य रहा। गँगवंश की प्रारंभिक तिथि 498 ई. मानी गई है। इस वंश का प्रारंभिक शासक इन्द्रवर्मन था। जिसने त्रिकलिंगाधिपति की उपाधि धारण की थी। माना जाता है कि गंगवंशी राजाओं का आगमन जगान्नाथ पुरी से हुआ था। इस वंश से संबंधित विस्तृत जानकारी का अभाव है।[32]

गंगवंश के पश्चात् नागवंश का अभ्युदय हुआ। संभवतः नाग या सर्प उनका गोत्र या प्रतीक चिन्ह था जिसके आधार पर वे नागवंशी कहलाए। प्रतीक चिन्हों के आधार पर इतिहासकारों ने नागवंशी शासकों को तीन शाखाओं में विभाजित किया है। शावक सहित तथा धनुर्व्याध्र प्रतीक नागवंशियों का निवास जहाँ बस्तर क्षेत्र में था वहीं उपरोक्त दोनों प्रतीकों के अभिलक्षण युक्त प्रतीक वाली तीसरी शाखा राजनांदगांव जिलें के

---

28. 'जॉन फेथफुल फ्लीट कापर्स, **'इंस्क्रिप्शन्स इंडिकेरम'**, पेज 20
29. मिरासी, **'मध्यप्रदेश का इतिहास'**, पेज 22
30. **कैटलाग आफ क्वायन्स ब्रिटिश क्यूजियम एलन**
31. **'रिपोर्ट, ईपीग्राफिका इंडिया'**, भाग 27, पेज 60–61
32. मन्मथलाल गुप्त – **'छत्तीसगढ दिग्दर्शन'**, 1996, पेज 33

भैरमगढ़ क्षेत्र में थी। छत्तीसगढ़ में नागवंश के प्रथम शासक श्री गोपालदेव थे। इस वंश के शासक नृपति भूषण व जगदेव भूषण के तीन अभिलेख भी प्राप्त होते हैं जिनकी तिथि क्रमशः 1023 ई., 1060 ई तथा 1062 ई. है। नाग तथा शिव के उपासक नागवंश के 24 शासकों ने लगभग 400 वर्ष तक शासन किया।[33]

पाँचवी शताब्दी के अंतिम दशकों में या छठी शताब्दी के प्रारंभ में छत्तीसगढ़ के राजनैतिक परिदृश्य में एक नवीनतम शक्तिशाली राजवंश अर्थात शरभ पुरीय वंश जो अमार्यकुल भी कहलाता था, का अभ्युदय हुआ। विद्वानों का मत है कि इस वंश के आदि पुरूष महाराज शरभराज थे जिनकी राजधानी झारखंड में थी जो पूर्व में शरभपुर के नाम से ज्ञात था। पिपरदुला, जिला सारंगढ तथा कुरूद (जिला रायपुर) में प्राप्त ताम्रपत्र शरभ के पुत्र द्वारा अपने सिहांसनारोहण के तीसरे तथा चौबीसवें वर्ष जारी किये गये थे। नरेन्द्र के पश्चात् 'प्रसन्नमात्र' का उल्लेख का प्राप्त होता है। प्रसन्नमात्र ने अपने नाम की स्वर्णमुद्राओं का चलन किया था। ये मुद्राए न केवल छत्तीसगढ़ में प्रत्युत पूर्व में कटक (जिला उड़ीसा) तथा पश्चिम में चाँदा (जिले महाराष्ट्र) में प्राप्त हुई है जिससे प्रसन्नमात्र के राज्य विस्तार का अनुमान बांधा जा सकता है।[34] ऐतिहासिक श्रोतों से ज्ञात होता है कि इस वंश में जयराज, सुदेवराज, प्रवरराज, व्याध्रराज, शासकों ने दक्षिण कोसल पर शासन किया। इस वंश के अंतिम राजा सुदेव राज के समय में पांडुवंशियों ने दक्षिण कोसल पर विजय प्राप्त कर शरभपुरीय राजवंश को समाप्त कर श्रीपुर (सिरपुर) को अपनी राजधानी बनाया।[35]

इस वंश का संबंध महाभारत कालीन पाण्डवों से नहीं था वरन् वे सोमवंशीय थे। पाँचवीं शताब्दी में छत्तीसगढ़ पर शासन करने वाले पांडुवंश के प्रारंभिक शासक उद्यन, इन्द्रवत, नन्नदेव थे, जिनका राज्य पर्याप्त रूप से विस्तृत था। पाण्डुवंश को शक्तिशाली बनाने का श्रेय नन्नदेव के सुपुत्र महाशिव तीवर को प्राप्त है। 'महाशिव' तथा 'महाभव' विरूद धारण करने वाले तीवरदेव शैव धर्म का अनुयायी था। उत्कल, कोसल आदि क्षेत्रों को पूर्ण विजय कर उसने 'कोसलाधिपति' की उपाधि भी धारण की।[36] राजिम, बालोद और बोंडा से प्राप्त ताम्रपत्रों से तत्कालीन शासन व्यवस्था की जानकारी मिलती है। तीवरदेव के पश्चात् उसका पुत्र महानन्न ने भी पाण्डु सत्ता का विस्तार किया। तद्नंतर क्रमशः चन्द्रगुप्त, हर्षगुप्त तथा नवशिवगुप्त बालार्जुन शासक बने। हर्षगुप्त की पत्नी मौखरीवंशीय राजकुमारी वासटा ने अपने पति की स्मृति में श्रीपुर में एक उतुंग मंदिर का निर्माण करवाया। वर्तमान समय में विद्यमान यह मंदिर भारतीय वास्तुकला की अनुपम कृति है। महाशिव गुप्त बालार्जुन के शासनकाल में राजधानी श्रीपुर की ख्याति दूर–दूरी फैल चुकी थी। उसकी धर्मसाहिष्णुता अनुकरणीय थी। मल्हार ताम्रपत्र से केसला नामक स्थान के

---

33. हीरा लाल शुक्ल, **'बस्तर का सांस्कृतिक इतिहास'**, पेज 28
34. बालचंद जैन, **'उत्कीर्ण लेख'**, पेज 9
35. प्यारेलाल गुप्त, **'प्राचीन छत्तीसगढ'**, 1973 पेज 56
36. **एपिग्राफिआ इंडिया**, जिल्द 23

बौद्धभिक्षु संघ को दान देने का उल्लेख प्राप्त होता है। बारदुला, लोथिया, मल्लार तथा बोंडा से प्राप्त ताम्र पत्र से प्रतीत होता है कि महाशिवगुप्त के राज्यकाल को छत्तीसगढ़ का स्वर्णयुग कहा जाय तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। महाशिवगुप्त के उत्तराधिकारियों तथा पांडुवंशीय शासकों ने कब तक छत्तीसगढ़ पर शासन किया इस संबंध में जानकारी अप्राप्त है। संभवतः चातुक्ल शासक पुलकेशिन द्वितीय ने पांडुसत्ता को क्षति पहुँचाई।[37]

दुर्ग और बालाघाट की सीमा पर स्थित ग्राम रछोली से प्राप्त ताम्रपत्र लेख से पता चलता है कि शरभपुरी वंश व कोसल राज्यों के मध्य चल रहे संघर्ष से उपजी अव्यवस्था का लाभ उठाकर शैलवंश के राजाओं ने कुछ समय तक छत्तीसगढ पर शासन किया।[38] इस वंश का प्रथम शासक श्रीवर्द्धन था जिसके द्वारा सूर्य मंदिर को 'खद्दीका' नामक ग्राम दान में देने का विवरण ताम्र लेख में प्राप्त होता है। श्रीवर्द्धन के दो अन्य उत्तराधिकारी पृथ्वीवर्द्धन और जयवर्द्धन के संबंध में विस्तृत जानकारी का अभाव है।

मेकल पहाड़ श्रेणियों से घिरे अमरकंटक क्षेत्र में पांचवी शताब्दी ई. में पाण्डव वंश का शासन था। महाभारत कालीन पाण्डुकुल से तो इसकी सबंद्धता स्थापित नहीं होती किंतु सोमवंशी पाण्डों के साथ संबंध के विषय में भी निश्चयपूर्वक कहना कठिन है। मेकलवंशी पाण्डवों के विषय में जानकारी देने वाले स्रोतों का अभाव है। यह ज्ञात हो सका है कि इस वंश के राजा भरतबल (इन्द्र) ने कोसल राजकुमारी लोकप्रकाश से विवाह किया था। बम्हनी के ताम्रपत्र में लोकप्रकाश को 'अमरजकुलजा' कहते हुए उसके सहोदर शरभपुरी नरेश नरेन्द्र की सराहना की गई है। भरतबल के पिता का नाम नागबल तथा माता का नाम इन्द्र भट्टारिका था। नागबल के पूर्वज से संभवतः गुप्तवंश के सामंत थे। उनकी पतनावस्था का लाभ उठाकर नागबल स्वतंत्र राजा बन बैठे। दुर्भाग्यवश राजा भरत के पश्चा्त इस वंश की कोई जानकारी नहीं प्राप्त होती।[39]

कोसल, कलिंग और उत्कल को जीतकर 'त्रिकलिंगाधिपति' की उपाधि धारण करने वाले सोमवंशी शासकों ने दीर्घकाल तक छत्तीसगढ़ पर शासन किया। इस वंश के प्रथम नरेश शिवगुप्त के उत्ताराधिकारी महाभवगुप्त की एक प्रशस्ति में उल्लेख मिलता है। – "स्वस्ति श्रीमत् परमभहारक महाराजाधिराज, परमेश्वर, शिवगुप्त वादानुध्यान परम भहारक महाराजाधिराज परमेश्वर सोमकुल तिलक त्रिकलिंगाधिपति महाराज श्री भवगुप्त '। शिवगुप्त के शासन काल में कोसल प्रदेश पर हैहयवंश का प्रथम आक्रमण हुआ। शिवगुप्त एवं महाभवगुप्त के पश्चात् महाशिवगुप्त के हाथ में सत्ता आई। लगभग 950 ई. से 1000 ई. तक शासन करने वाले इस शासक ने संभवतः ययातिनगर नामक नया नगर राजधानी हेतु बसाया। तत्पश्चात् उसका पुत्र भीमरथ द्वितीय महाभवगुप्त के सत्ता में आया जिसने 1000 ई. से 1015 ई. तक शासन किया। 1015 ई. से 1020 ई. तक इसके पुत्र

---

37. प्रयाग दत्त शुक्ल, **'सतपुड़ा की सभ्यता'**, 1953 पेज 97
38 रायबहादुर हीरालाल, **'सी.पी. इंसक्रिप्शंस'**
39. बालचन्द जैन, **'उत्कीण लेख'**, 1955, पेज 10

भीमरथ का शासन था। इस वंश का महत्वपूर्ण प्रतापी शासक महाशिवगुप्त तृतीय था। भुवनेश्वर इसकी राजधानी थी। भुवनेश्वर के मंदिरों के निर्माता वस्तुतः कोसल के सोमवंशी ही थे। उसने समग्र रूप से कोसल तथा उत्कल क्षेत्र को आक्रांताओं से मुक्त किया। सोमवंश का अंतिम भाग्यदीपक महाभवगुप्त चतुर्थ (उघोत केसरी) था जिसने कल्चुरियों और बंगाल के पालों का सफलतापूर्वक सामना किया। लगभग 1085 ई. तक शासन करने के पश्चात् महाभवगुप्त चतुर्थ के अवसान के साथ ही सोमवंशी सत्ता का अंत एवं कल्चुरियों के नये ऐतिहासिक अध्याय का प्रारंभ हुआ।

छत्तीसगढ़ पर सर्वाधिक लंबे समय तक शासन करने वाला वंश कल्चुरीयों का था। नवीं शताब्दी के अंत में कल्चुरियों ने छत्तीसगढ़ में अपनी सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया। तद्नंतर कलिंग नामक कल्चुरि नरेश ने दक्षिण कोसल को जीत कर बिलासपुर के निकट तुम्माण में राजधानी स्थापित की। उसके पश्चात 'कमलराज' एवं 'रत्नराज' के गद्दी पर बैठने का उल्लेख मिलता है रत्नराज के शासनकाल तक आते आते सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ पर कल्चुरी नरेशों का आधिपत्य स्थापित हो चुका था।[40] 1114 ई. के एक शिलालेख में इस वंश के प्रतापी राजा जाजल्यदेव ने रतनपुर पर आधिपत्य कर वहाँ अपनी राजधानी स्थापित की। 1460 ई. में कल्चुरी शासकों के अधीन छत्तीसगढ़ दो राजनैतिक सत्ता के केंद्रों में विभाजित हो गया। राय रत्नदेव की राजधानी रतनपुर (शिवनाथ नदी के उत्तर में 17 गढ़) एवं राय ब्रम्हदेव की राजधानी रायपुर (शिवनाथ नदी के दक्षिण 17 गढ़) निश्चित की गई। रायब्रम्हदेव की एक राजधानी खल्वाटिका में भी रखी गई थी। सन्1536 ई. से 1573 ई. के मध्य कल्याण साय के शासन काल में रतनपुर का राज्य मुगलों के करद राज्य के रूप में परिणित हो गया। लगभग 700 वर्षों तक कल्चुरी निर्बाध रूप से छत्तीसगढ़ पर शासन करते रहे।

1.3 मराठा एवं ब्रिटिश काल में छत्तीसगढ़ राज्य की प्रामाणिकता :–

औरगजेब की मृत्यु के पश्चात् इस क्षेत्र में मराठों के प्रभाव में विस्तार हुआ। 1742 ई. में नागपुर के भोंसला शासक रघुजी राव के सेनापति भास्कर पंत ने 30,000 सेनिकों के साथ तत्कालीन कल्चुरी शासक रघुनाथ सिंह पर आक्रमण किया।[41] दुर्लबल राजा ने बिना लड़े ही पराजय स्वीकार कर ली।[42] भोंसला शासक के प्रतिनिधि के रूप भास्कर पंत की नियुक्ति की गई। 1757 ई. में भोंसलों ने रतनपुर को अपने प्रत्यक्ष शासन में अधिग्रहित करते हुए मराठा शासक बिंबाजी को यहाँ की सत्ता सौंप दी। दूसरी ओर रायपुर शाखा के कल्चुरी 1750 ई. तक निर्बाध रूप से राज्य करते रहे। अंततः 1757 ई. में अमरसिंह को गद्दी से हटाकर और रायपुर शाखा के वंशजों को 5–5 गांव जागीर में प्रदानकर सम्पूर्ण

---

40 बालचन्द्र जैन, **'ताम्र पत्र की प्रतिलिपि' उत्क्रीर्ण लेख**, पेज 51

41. शिवदत्त राय शास्त्री गौराहा, **रतनपुर इतिहास समुच्चय** अप्रकाशित पाडुलिपि

42. डॉ. भगवान सिंह ठाकुर **'छत्तीसगढ़ में भोंसला राज्य'**, शोध प्रवंध, 1976,

ब्रिटिश भारत और भारतीय राज्य
भारतीय राज्य
भारतीय प्रांत
अफगानिस्तान
चीन
तिब्बत
पंजाब
सिक्किम
नेपाल
भूटान
असम
मणिपुर
सिंध
कच्छ
संयुक्त प्रांत
बिहार
बंगाल
कलकत्ता
मध्य प्रांत
उड़ीसा
हैदराबाद
अरब सागर
मैसूर
मद्रास
बंगाल की खाड़ी
कोचीन
ट्रावणकोर
श्रीलंका
अरब सागर
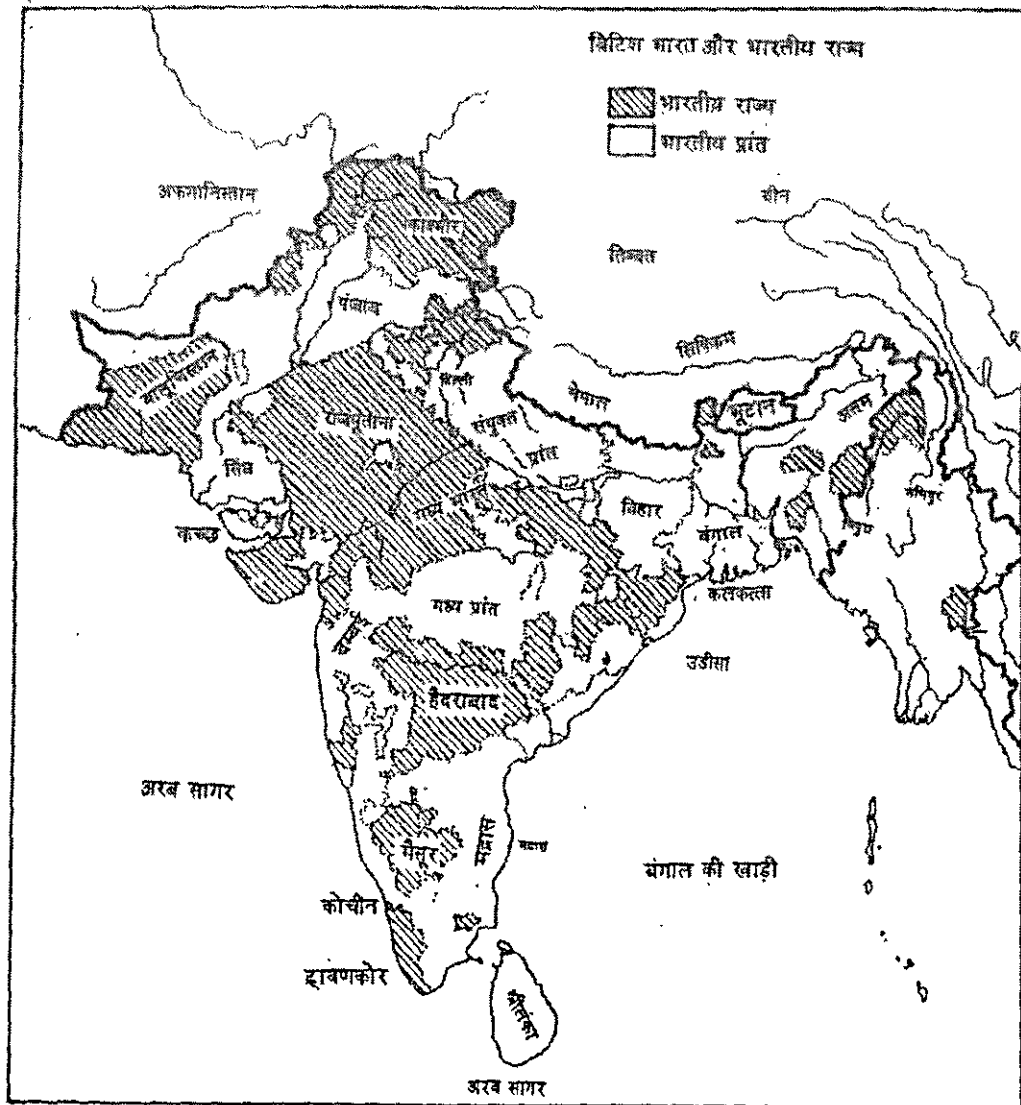
मानचित्र क्र. : 2

छत्तीसगढ़ को भोंसले ने अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण में ले लिया और सम्पूर्ण सत्ता बिम्बाजी को सौप दी। एक योग्य कुशल तथा लोककल्याण कारी शासक के रूप में बिम्बाजी ने स्थानीय जनता के ह्रदय पर राज्य किया। 1787 ई . में बिम्बाजी की मृत्यु के पश्चात् व्यंकोजी ने छत्तीसगढ़ की बागडोर संभाली। उसके शासनकाल में नागपुर ही समस्त राजनैतिक क्रियाकलापों एवं प्रशासनिक गतिविधियों का केन्द्र बना रहा, व्यंकोजी ने छत्तीसगढ़ में सूबेदारों के माध्यम से शासन चलाने की नवीन प्रथा का सूत्रपात किया। [43] सूबा शासन एक सर्वथा असफल एवं बोझिल प्रणाली थी। इस काल में शोषण, अराजकता, कृषि का पतन और अव्यवस्था अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचे। इस काल में छत्तीसगढ़ राज्य की आमदनी साढ़े छः लाख से गिर कर तीन लाख रुपये हो गयी थी। [44] इन्हीं विपरीत परिस्थितियों में नागपुर में ब्रिटिश सत्ता के स्थापना हुई, इसके साथ ही छत्तीसगढ़ स्वमेव अंग्रेजों के आधिपत्य में आ गया।

नवम्बर 1817 ई. में सीताबर्डी के युद्ध में भोंसलों की पराजय और अंग्रेजों के विजय के परिणामस्वरूप नागपुर पर ब्रिटीश नियंत्रण स्थापित हो गया। अंग्रेजों ने नागपुर राज्य को 4 जिलों में विभक्त किया जिनमें से एक था छत्तीसगढ़ जिला और जिसका केन्द्र था रायपुर। नागपुर पूर्ववत सदर मुकाम बना रहा। केप्टन एडमंड प्रथम, कर्नल एगेन्यू रायपुर के द्वितीय प्रशासनिक अधिकारी बने। 1818 ई. से 1830 ई. तक छत्तीसगढ़ अंग्रेजी संरक्षण में रहा। 1830 ई. में पुनः देशीसत्ता की स्थापना हुई। इस समय रघुजी तृतीय शासक थे। 11 दिसम्बर 1853 ई. को रघुजी की मृत्यु के पश्चात् उनका कोई पुत्र न होने के कारण डलहौजी की हड़प नीति के तहत सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ पर ब्रिटिश सत्ता की विधिवत स्थापन हो गई। [45] इस तरह ब्रिटिश सत्ता का प्रारंभ हुआ। 1861 ई. में सेन्ट्रल प्राविंसेस के गठन के पश्चात् छत्तीसगढ़ इस विशाल प्रांत का एक संभाग बन गया और यह व्यवस्था सन् 1947 तक बनी रही।

1.4 भाषा तथा साहित्य में छत्तीसगढ़ राज्य

1 नवम्बर 2000 को भारतीय गणतंत्र के 26 वें राज्य के रूप में अस्तित्त्व आये छत्तीसगढ़ राज्य के नामकरण के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने भिन्न – भिन्न मत प्रदर्शित किये हैं। छत्तीसगढ़ शब्द का शाब्दिक अर्थ है – 'छत्तीस किले अथवा गढ़। मध्यप्रदेश के पूर्वी भाग अर्थात् नवसृजित राज्य छत्तीसगढ़ संबंधित ऐतिहासिक स्रोतों से यह तथ्य प्रतिपादित होता है कि यह क्षेत्र, प्राचीन काल में छत्तीसगढ़ के स्थान पर अन्यान्य नामों से पुकारा जाता था। विद्वान इतिहासकारों के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि चेदिशगढ़,

---

43. प्रयागदत्त शुक्ल , **'मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले'**, 1930, पेज 142
44. **'अर्ली योरोपियन ट्रेवलर्स इन नागपुर'**, 1930 पेज 28
45. प्रयागदत्त शुक्ल , **'मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले'**, 1930, पेज 191–198

चेदि कोसल, चेदि जनपद, अधिष्ठी, दक्षिणापथ, महाकोसल, दक्षिण कोसल, महाकांतार, दण्डकारण्य आदि विशेषणों का प्रयोग उसी भू–भाग के लिए किया जाता रहा है जिसे हम आज छत्तीसगढ़ के नाम से पहचानते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास के महान विचारक पाणिनी ने राज्य के नामकरण की प्रक्रिया के संबंध में लिखा है –"राज्यों के नाम वही होते हैं जिस नाम से उस राज्य के निवासी संबोधित किये जाते हैं। प्रत्येक निवासी का एक अमिधान उसके राज्य के नाम के अनुसार होता है, जैसे अंग राज्य का निवासी आंगक, मिथला का निवासी मैथिल कहलाता था।"[46]

प्राचीन भारतीय इतिहास के ऋग्वैदिक काल में छत्तीसगढ़ की पहचान सर्वप्रथम दक्षिण कोसल के रूप में स्थापित होती है। डॉ. एस एन. प्रधान ने अपने नवीनतम अध्ययन से यह प्रमाणित किया है कि विंध्याचल पर्वत श्रेणी के आसपास बसे दक्षिण कोसल, चेदी, दसारन, निषाद, विदर्भ क्षेत्र वस्तुतः ऋग्वैदिक बस्तियाँ थे।[47] उनका स्पष्ट मत है कि ऋग्वेद में जिन चेदियों का उल्लेख है उन्हें महाभारत में वर्णित चेदियों से संबंधित नलोपख्यामं से जोड़कर इस क्षेत्र की प्राचीनता को समझा जा सकता है। ऋग्वैदिक काल के पश्चात् पुराणों, महाभारत व रामायण के वर्णनों में भी दक्षिण कोसल का उल्लेख प्रायः प्राप्त होता है। पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने अपने शोध द्वारा यह तथ्य स्थापित किया है कि रामयाण काल में कोसल नाम के तीन प्रदेश थे। [48] प्रथम, राम के पिता महाराज दशरथ का कोसल –

कोशलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान।
निविष्टः सरयूतीरे प्रभूत धन–धान्यवान ।।5।।

एक दूसरा कोसल भी था जिनका भी उल्लेख इसी बालकाण्ड में है –

तथा कोसल राजानं भानुमन्त सुसत्कृतम्।
मगधाधिपतिं शुरं सर्वशास्त्र विशारद्य।।26।। (बालकांड सर्ग 13)

एक तीसरे कोसल का वर्णन भी रामायण में प्राप्त होता है जो काशी कोसल या पूर्व कोसल के नाम से जाना जाता था।

द्राविकाः सिंधु सौवीराः सौराष्ट्र दक्षिणायथाः
बंगांगमग धामत्सायाः समूधाः काशि कोसला ।।
(अयोध्याकांड सर्ग 101)

उपरोक्त वर्णित तीनों कोसल प्रदेशों में प्रथम एवं तीसरे श्लोक में वर्णित कोसलधिपति स्पष्ट रूप से व्याख्यायित है। दशरथ का कोसल उत्तर कोसल कहलाता था इसी प्रकार तृतीय श्लोक में उल्लेखित काशी कोसल पूर्वी कोसल के नाम से भी

---

46. हरि ठाकुर **'छत्तीसगढ़ गाथा'**, 1998, पेज 18
47. डॉ. एस.एम प्रधान, **'क्रानोलाजी ऑफ एंशियेंट इंडिया'**, 2002, पेज 202
48. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय **'एंटीक्यूटी ऑफ महाकोसला'**, महाकोसल हिस्टॉलिकल सोसायटी पेपर, पेज 108

जाना जाता था। अतः द्वितीय श्लोक में जिस कोसल का उल्लेख है संभवतः वही दक्षिण कोसल प्रदेश था। श्री राम की माता कौसल्या देवी को पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय दक्षिण कोसल का ही मानते हैं।[49] उनकी इस धारणा को महाकवि कालिदास लिखित 'रघुवंश' से और अधिक प्रमाणित करने में सहायता मिलती है।

तमलभन्त पतिं पतिदेवताः शिखरिशमिन सागरमापगाः।
मगध–कोसल केकय शासिनां, दुहिवरोहितरोपित मार्ग नम्।।7।।
(रघुवंध सर्ग 91)

आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने इस तथ्य को स्वीकारते हुए लिखा है कि– "दशरथ योद्धा ओर प्रतिष्ठित राजा थे। नीतिवान और सत्यप्रज्ञ थे। उनकी तीन महारानी थी। प्रथम कौसल्या जो दक्षिण कोसलाधिपति भानुमंत की पुत्री थी। डॉ. हीरालाल शुक्ल के अनुसार भी – भानुमंत दक्षिण कोसल अर्थात् छत्तीसगढ़ का शासक और कौसल्या का पिता था।" [50] पंडित लोचन प्रसाद पाण्डेय ने लिखा है "कौसल्या जो भगवान श्री रामचन्द्र की माता थी, उनके नाम से ही स्पष्ट है कि उन्हे यह नाम कोसल राज्य की राजकन्या होने के कारण मिला था निश्चय ही, यह कोसल राज्य उस उत्तर कोसल से भिन्न था, जहाँ महाराजा दशरथ निवास करते और शासन करते थे।" रायपुर जिला गजेटियर के अनुसार भी – महाकाव्य की कथ्य से स्पष्ट है कि उत्तर कोसल के नरेश महाराजा दशरथ का विवाह कौशल्या से हुआ था, यह प्रमाणित होता है कि वह किसी अन्य कोसल राज की कन्या थी। ऐसी अवधारणा है कि दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़) राज्य की स्थापना इक्ष्वाकुवंशियों ने की थी।

इस सन्दर्भ में सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री वासुदेव शरण अग्रवाल का मत है कि – एक जनपद के निवासी प्रायः एक भाषा या बोली बोलते थे। प्रत्येक व्यक्ति का अभिधान उसके जनपद के अनुसार था, जैसे अंग जनपद का निवासी आंगक कहलाता था। प्रायः स्त्रियों के लिए भी इसी भाँति विशेषण होते थे, जैसे आंगी, बांगी, मौधेयी आदि। स्त्रियाँ जब विवाहित होकर पतिकुल में पहुँचती थी तो उनकी वहाँ विशिष्ट अमिधा बनी रहती थी। कुंती, गांधारी, कौसल्या, कैकेयी ये प्रसिद्ध नाम जनपद से ही संबद्ध थे।[51]

उपरोक्त प्रथा के अनुसार छत्तीसगढ़ जो प्राचीन काल में कोसल कहलाता था, उसके नरेश कोसल्य तथा राजकन्याऐं कोसल्या कहलाती थी। अयोध्या के नरेश एक्ष्वाकु तथा उनकी कन्याऐं ऐक्ष्वाकी कहलाती थीं। उदाहरण के लिए :–

"एक्ष्वाकी चाभवद भार्या सत्वांस्त स्याम जायत।

---

49. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय **'एंटीक्यूटी ऑफ महाकोसला'**, महाकोसल हिस्टॉलिकल सोसायटी पेपर, पेज 108
50. डॉ. हीरा लाल शुक्ल, **'लंका की खोज'**, पेज 84
51. वासुदेव शरण अग्रवाल, **'पाणिनी कालीन भारत वर्ष'**, पेज 104

सत्वान सर्व गुणोपेतः सात्वानां कीर्तिवर्धनः।। (हरि .पु. अ. 34)
सत्वतात्सत्व सम्पन्नान् कौसल्या सुषक्सुतान।
भजिंन भजमानं च दिव्यं देवावृधं नृपम्।।"(हरि. पु.अ. 37)

डॉ. हेमचन्द्र रामचौधरी ने भी शतपथ ब्राम्हण के सन्दर्भ में मत प्रकट किया है – "शतपथ ब्राम्हण में हैरण्यनाम को कौसल्यराज कहा गया है किंतु एक्ष्वाकु नहीं माना गया है। इसके विपरीत पुस्कृत्य को एक्ष्वाकु माना गया है किंतु कोसल्य राज नहीं माना गया है। जैसे कि कौसल्यराज और एक्ष्वाकु में अंतर हो इसलिए दोनों प्रकार के राजाओं का एक ही वंश तथा एक ही देश का शासक नहीं कहा जा सकता।[52] अतः स्पष्ट है कि अयोध्या का नाम "कोसल" बहुत बाद में पड़ा। डॉ. रमेशचन्द्र मजुनदार के अनुसार – अयोध्या को अत्यंत योग्य राजाओं की परम्परा के अधीन पुनः शक्ति प्राप्त हुई। इनमें भागीरथ, दिलीप, रघु और दशरथ आदि थे। जिनके समय में अयोध्या का नाम कोसल पड़ा है। इस सन्दर्भ में रामायण का एक और प्रसंग है कि कैकयी के कोपभवन में निवास का समाचार सुनकर महाराजा दशरथ उनके पास जाते हैं। वे कैकयी से कहते हैं –

"यावदावर्तते चक्रं तावती में वसुन्धरा।
द्राविड़ा सिंधु, सौवीराः, सौराष्ट्राः दक्षिणः प्रथाः।
वंगांग मत्स्याः समृद्धाः काशी कोसलाः।
पृथिव्यां सर्वराजोऽस्मि सम्राटस्मि महीक्षिताम्।।
(अयोध्याकांड वै.सं.आ. प्र. पृ. 134)

अर्थात् दशरथ ने द्रविड़, सिंधु, सौगेर, सौराष्ट्र, दक्षिणा पथ अंग, बंग, मत्स्य, कासी कोसल आदि राज्यों पर विजय प्राप्त कर सम्राट का पद प्राप्त किया है। यहा कासी के साथ जिस कोसल का उल्लेख है, निश्चय ही उसका तात्पर्य छत्तीसगढ़ राज्य के प्राचीन नाम कोसल से है न कि अयोध्या से। अयोध्या पर तो उसका शासन वंश परम्परा से था, अतः उसे जीतने का प्रश्न ही नहीं उठता।[53] यह इस तथ्य का भी संकेत है कि महाराजा दशरथ के पूर्व अयोध्या का नाम कोसल नहीं था। चूंकि अयोध्या राज्य का नाम बाद में कोसल पड़ा, अतः उसे उत्तर कोसल कहा जाने लगा। यहाँ उत्तर शब्द कालवाचक है जिसका अर्थ 'पश्चात्' होता है, जैसे उत्तराकाण्ड। महाभारत के दिग्विजय पर्व से छत्तीसगढ़ वाले कोसल राज्य को प्राक्कोसल कहा गया है।

कांतारकांश्च समरे तथा प्राक् कोसलान नृपान।
नाटकेयांश्च समरे हेरम्बनकान सुधि।। – दिग्विजय पर्व अ. 39

अर्थात् सहदेव ने कांतर तथा प्राककोसल के राजाओं को जीतकर नारकेय तथा हेरम्बकों को युद्ध में पराजित किया। यहाँ प्राक शब्द कालवाचक है

---

52. डॉ. हेमचंद्र राय चौधरी, **प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास**, पेज 83
53. हरि ठाकुर, दैनिक अग्रदूत,लेख, **छत्तीसगढ़ का प्रारंभिक विकास**, 1नवंबर 2000, पेज 4

जैसे प्राक्कथन, प्रागैतिहासिक आदि। अतः यह सिद्ध होता है कि छत्तीसगढ़ मूल कोसल है। इसलिए पुराणों, प्राचीन ग्रंथों, शिलालेखों, ताम्रपत्रों में इसे कोसल ही कहा गया है। उसके साथ 'दक्षिण' या 'महा' विशेषण नहीं लगाया जाता था। इसका उदाहरण स्वयं वाल्मीकि रामायण, उत्तराकांड अ. 107 में है जिसमें श्री राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश को कोसल का राज्य तथा छोटे पुत्र लव का उत्तर कोसल का राज्य उत्तराधिकार में देने का उल्लेख किया गया है। श्री राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश को उत्तराधिकार में जो कोसल राज्य प्राप्त हुआ, उसे ही बाद में इतिहासकारों ने 'दक्षिण कोसल' के नाम से इतिहास के पृष्ठों पर अंकित किया। अतः स्पष्ट है दक्षिण कोसल का ही आधुनिक नाम छत्तीसगढ़ है।

महान व्याकरणाचार्य पाणिनी ने भी कोसल देश का वर्णन इस प्रकार किया है –[54]

वृद्धेत कोसला जादाञ आङ् ।।

महाराज हर्षवर्धन के रत्नावली नामक ग्रंथ मे स्पष्ट रूप में लिखा है कि –' विंध्य दुर्गा व स्थितस्य कोसल नृपते'। प्रसिद्ध चीनी यात्री व्हेनसांग ने भी अपने यात्रा वर्णन में कलिंग होते हुए दक्षिण कोसल पहुँचने का उल्लेख किया है जिसकी राजधानी श्रीपुर या वर्तमान सिरपुर थी, जो महानदी के तट पर बसी थी।महाभारत में भी कोसल देश को अंग बंग और कलिग जैसे समुद्रतटीय क्षेत्रों के साथ दर्शाया गया है। एक अन्य स्थान पर वर्णन है ततः समुद्र तीरण बंङ्गान पुण्ड्रान सकोसलान।। 28।।

(महाभारत, अध्याय 82, श्लोक 28)

महाभारत में उज्जैन को दक्षिण कोसल के पश्चिम में बनाने वाले वन पर्व के श्लोक में कहा गया है –

गौसहस्त्र पलं विन्धात् कुलम्चैव समुद्धरेत।
कोसलां तुमसासाथ, कालतीथुप स्पृशेत।। (अध्याय 84 वन पर्व)

प्राचीन विद्वान वराहमिहीर ने कोसल देश के संबंध में वर्णन करते हुए लिखा है –

आग्रेयां दिशि कोशल कलिङ्ग वंगोपवग जठरांगाः।
शौतिक विदर्भ वत्सा छ चेदिका श्लोर्ध्व कंशाठाश्च ।। –

(वृहतसंहिता, अध्याय 145, श्लोक 8)

इसी ग्रंथ में एक अन्य स्थान पर वराहमिहिर कोसल को हीरों की प्राप्ति का स्थल बताते हुए लिखते हैं –

वेणा तटे विशुत्रय शिरिष कुसुमोपयं च कौशलम्
सौराष्ट्र कमावाम्रकृष्णां सौर्परक वजस्र।।

जाज्जनल्लदेव के समय के रतनपुर में प्राप्त एक शिलालेख

---

54. डॉ. पी.एल मिश्रा, **दक्षिण कोसल का इतिहास**, 2003, पेज 27

में कोसल का इस प्रकार उल्लेख है –

क्षोणी दक्षिणकोसलो जनपद बाहु द्वेयेनार्जितः।

सन् 1114 के शिललेखा के अनुसार छत्तीसगढ़ का प्राचीन नाम दक्षिण कोसल का उल्लेख मिलता है –

'लाठा दक्षिण कोसलान्ध खिगड़ी वैरागम लंजिका।'

छत्तीसगढ़ राज्य के लिए रामायण काल में प्रचलित कोसल का विशेषण महाभारत काल में 'चेदि देश' के रूप में अधिकतर प्रचलित हो गया। महाभारत के अनुसार चेदिवंश का राजा अर्जुन का पुत्र बब्रुवाहन था जिसकी राजधानी चित्रागंदपुर थी जो वर्तमान में सिरपुर के नाम से प्रसिद्ध है। महाभारत कालीन साहित्य के अनुसार त्रिपुरी और उसके आसपास का क्षेत्र सरगुजा आदि चेदि जनपद में सम्मिलित थे। महात्मा बुद्ध के समय में उत्तरभारत के सोलह बड़े राज्यों में 'चेदि' भी सम्मिलित था। मौर्यों के शासनकाल मे चेदि जनपद, मगध साम्राज्य का अंग था।

इतिहास कार कर्निंधम ने छत्तीसगढ़ का प्राचीन नाम महाकौशल बतलाते हैं।[55] दक्षिण कोसल आगे चलकर महा कोशल क्यों कहलाने लगा इस संबंध में डॉ. बल्देव प्रसाद तर्क देते हैं कि कार्तवीर्य सहस्रार्जुन के वंशज चेदि हैह्य ने जिनका राज्य इसी क्षेत्र में लगभग डेढ़ हजार वर्षों तक रहा इसकी महत्ता बढ़ाने के लिऐ इसे महाकोसल कहना आरंभ किया, ठीक उसी तरह जैसे नदी महानदी बन गई, एक छोटा सा गांव महासमुन्द हो गया, आराध्य देवी 'महामाया' कहलाने लगी और राजाओं के नाम से एक 'महाशिवगुप्त' हो गया।[56] महाकोशल में आगे चलकर चेदिवंशी राजाओं के राज्य होने के यह चेदिशगढ़ कहलाने लगा जो बोलचाल में आकर छत्तीसगढ़ हो गया।[57] प्रस्तुत तर्क के समर्थन में रायबहादुर हीरालाल छत्तीसगढ़ के कल्चुरी राजाओं द्वारा उत्कीर्ण कुछ सिक्कों में चेदि संवत जैसे प्रयोगों की ओर सकेंत करते हैं किन्तु श्री जयचंद्र विधालंकार का मत है कि प्राचीन चेदि राज्य का तात्पर्य वर्तमान बुंदेलखण्ड से है जबकि महाकोसल उसका समीपवर्ती राज्य था।[58]

छत्तीसगढ़ राज्य नाम की सार्थकता पर इतिहासकार टालेमी ने लिखा है कि इस प्रदेश का प्राचीन नाम अधिष्ठी था और अधिष्ठान पर्वत माला इसके दक्षिण में है। कर्निंधम के अनुसार अधिष्ठी का 'अधिष' ही छत्तीस हो गया।[59] आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया की सन् 1875 की रिपोर्ट में श्री जे.डी. वेंग्लर लिखते हैं – बिहार में जनश्रुति है कि जरासंघ के राज्यकाल में चर्मकारों के छत्तीसघर दक्षिण की ओर चले गये थे

---

55. कर्निंधम, **आर्कियोलाजीकल सर्वे ऑफ इंडिया**, जिल्द 17, पेज 68
56. रायबहादुर हीरालाल, **'इसक्रिप्शन्स ऑफ सी.पी.एण्ड बरार**, पेज 119
57. जयचंद विद्यालंकार **'त्रिपूरी का इतिहास'**, पेज 10
58. डॉ. भोलानाथ तिवारी, **'हिन्दी भाषा'**, से उद्धृत
59. पी.एन. बोस, **'जनरल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल**

और इस भूभाग में आकर बस गये, इसलिए इसका नाम छत्तीसधर पड़ा जो बिगड़ते–बिगड़ते छत्तीसगढ़ हो गया। इतिहासकार पी. एन. बोस ने इस मत को अस्वीकार करते हुए तर्क दिया है कि छत्तीसगढ़ के मूल निवासी चर्मकार जाति के नहीं है तथा केवल किवदंतियो पर आधारित तथ्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

डॉ. पी.एल. मिश्र का मत है कि – "वैदिक काल से यह प्रदेश साहित्यिक ग्रंथो ताम्रपत्रों शिलालेखों और विदेशी लेखकों द्वारा कोसल नाम से ही पुकारा जाता था। यहाँ के शासक कोसलेन्द्र, कोसलाधिपति, सकल कोसलाधिपति इत्यादि नामों से अपने आपको संबोधित करते थे। पुरातात्विक आधार को ही लें तो अलहाबाद प्रसस्ति से लेकर 18 वीं सदी तक कोसल या महाकोसल नाम से ही संबोधित हुआ। यहाँ के शासक अपने इस विशाल प्रदेश के कारण ही अपने नाम के आगे महा लगाते थे। महाराज भवगत्त वर्मन भट्टारक, महादुर्ग राज, महासुदेव राजय, महाशिव गुप्त बालार्जुन, महाकलिंगराज उपाधियों से अपने आपको विभूषित करते रहे।

साहित्य में छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग :–

साहित्य में सर्वप्रथम यह विशेषण राजा लक्ष्मीनिधिराय की प्रशस्ति में सन् 1497 ई. में पहली बार प्रयुक्त हुआ। जिसे चारण कवि दलपतराय ने लिखा था–

लक्ष्मीनिधिराय सुनौ चित्त दै, गढ़ छत्तीस में न गढ़ैया रही।
मरदुमी रहीं नहिं मरदन के, फेर हिम्मत से न लड़ैया रही।
भय भाव भरे सब कांप रहे, भय है नहि जाय डरैया रही।
दलराम भनै सरकार सुनो नृप कोऊ न ढाल अडैया रही।[60]

उपोरक्त काव्य पद यह प्रमाणित होता है कि इस भूभाग के लिए 'छत्तीसगढ़' नाम सन् 1497 के पूर्व ही प्रचार में आ चुका था। इसके बाद साहित्य में यह नाम सन 1689 में पुनः गोपाल मिश्र की रचना 'खूब–तमाशा'के सातवें छंद में प्रयुक्त हुआ[61]

छत्तीसगढ़ गढ़ गाढ़े जहाँ बड़ें गढ़ोई जानि
सेवा स्वामिन को रहैं सकें ऐंड को मानि।।

गोपाल मिश्र की इस रचना से यह स्पष्ट है कि सत्रहवीं शताब्दी के उत्तदार्द्ध तक छत्तीसगढ़ का उपयोग जन सामान्य में भी लोकप्रिय होता जा रहा था। इसके पश्चात् रतनपुर के प्रसिद्ध विद्वान बाबू रेवाराम कायस्थ "विक्रम–विलास" नामक ग्रंथ में छत्तीसगढ़ के स्वरूप को कुछ इस तरह चित्रित करते हैं।

तिनके दक्षिण कोसल देसा, जहं हरि ओतु केसरी बेसा।

---

60. डॉ. आदर्श, **'छत्तीसगढ़ के साहित्यकार'**, पेज 8
61 कवि गोपाल मिश्र **'खूब तमासा'** पांडुलिपि, सन् 1689,पेज 1

तासु मध्य छत्तीसगढ़ पावन, पुण्यभूमि सुर मुनि मन भावन।
रत्नपुरी तिनमें है नायक, कासी सम सब विधि सुख दायक।[62]

छत्तीसगढ़ के नामकरण के संबंध में प्रचलित एक अन्य मत के अनुसार यहाँ क्षत्रियों के छत्तीस जातियों ने राज्य किया था। अतएव इस भूभाग का नामकरण छत्तीसगढ़ पड़ा।

पंडित गोपाल चन्द्र मिश्र लिखते हैं [63] –

परजा के अमनैक गांऊ प्रति बसै छत्तीसों जातैं
परजा देर साहेब को अमनैको समया तै।
कोई जाति चालि अपने नै बढ़त बढ़त चलि जाहीं।
सो पुनि पांच पचास गांठ के ठाकुर एक कहाहीं।
ठाकुर पाँच–पचास ठीक ते, बड़े बड़े उमरावै
ते उमराव पचास के ऊपर बड़े एक जो छाजा
सो देखै सो खूब तमासा ते राजन पर राजा।

रतनपुर के सुकवि गोपाल अपनी रचना 'नीति शतक' में 'छत्तीस कुरी' उल्लेख करने से नहीं चुके हैं।

बरन सकलपुर देव देवता, नरनारी रस–रस के
बसय छत्तीस कुरी सब दिन के रस बासी बस–बस के।

रतनपुर के सौन्दर्य वर्णन पर आधारित छत्तीस कुरी का प्रयोग लगभग डेढ़ सौ वर्ष बाद रेवाराम बाबू ने भी किया –

बसत नगर शोभा की खानि, चार बरन जिन धर्म निदान
और कुरी छत्तीस है वहाँ, रूप राशि गुन पुरन महाँ।
अति विस्तार सघन बहु बसे, रचि बाजार महल जहं लखे।
अमरावती सरस पुर सोया, देखत परम रम्य सुर लोभा।

यहाँ कुरी शब्द का आशय छत्तीस कुलों या वंशो से हैं। लालप्रद्युम्नसिंह ने भी यह मत व्यक्त किया है कि "प्राचीन काल में छत्तीसगढ़ विभाग में छत्तीस राजा राज्य करते थे। इनकी छत्तीस राजधानियाँ थी और प्रत्येक राजधानी में एक गढ़ था। छत्तीस गढ़ होने के कारण इस भूभाग का नाम छत्तीसगढ़ पड़ा।[64]

वस्तुतः यह प्रमाणित एवं ऐतिहासिक सत्य है कि इस क्षेत्र में छत्तीस गढ़ों यानि दुर्गो का अस्तित्व था जिनके अवशेष आज भी विद्यमान है। यही कारण है कि इस क्षेत्र को इतिहास के पन्नों पर 'छत्तीसगढ़' के रूप में पहचान प्राप्त हुई। अंचल की

---

62. रेवाराम बाबू द्वारा हस्तलिखित ग्रंथ **'विक्रम विलास'** संवत 1836
63. गोपाल कवि **'खूब तमाशा'**
64. लाला प्रद्युम्न सिंह **'नागवंश'** पेज 2

स्थानीय यायावर जाति देवार अपनी गौरव गाथाओं में भी अपने पूर्वजों का मान करते समय गढ़ो की संख्या का उल्लेख करते हैं। जैसे बावनगढ मंडला, सोरागढ़ नागपुर, बाईसगढ़ उड़िथान, अठारह गढ़ रतनपुर, बावनगढ़ गढ़ा आदि। ऐतिहासिक वर्णनों में छत्तीस गढ़ों से उत्तर 18 गढ़ शिवनाथ नदी के उत्तर में तथा शेष 18 गढ़ दक्षिण में अवस्थित थे। साक्ष्य बतलाते हैं कि आगे चल कर इनमें से उत्तर 18 गढ़ रतनपुर राज्य व दक्षिण के 18 गढ़ रायपुर राज्य के अधीन हो गये। ये गढ़ आज भी अस्तित्व में है रायपुर[65] एवं बिलासपुर[66] गजेटियर में इन गढ़ों का उल्लेख है।

	रतनपुर राज्यान्तर्गत		बिलासपुर राज्यान्तर्गत
1.	रतनपुर	1.	रायपुर
2.	मारो	2.	पाटन
3.	विजयपुर	3.	सिमगा
4.	खरौद	4.	सिंगारपुर
5.	कोरगढ़	5.	लवन
6.	नवागढ़	6.	अमीरा
7.	ओखर	7.	दुर्ग
8.	सोंठी	8.	सारघा
9.	पंडरभाठा	9.	सिरसा
10.	सेमरिया	10.	मोहदी
11.	मदनपुर	11.	खलारी
12.	कोसगई	12.	सिरपुर
13.	लाफा	13.	फिंगेश्वर
14.	केंण	14.	राजिम
15.	भातिन	15	सिंगारगढ़
16.	उपरोड़ा	16.	सुअरमार
17.	कंडरी (पेडरा)	17.	टेगनागढ
18.	करकट्टी (वर्तमान बंघेलखंड में)	18.	अकलबाड़ा

बिलासपुर के बंदोबस्त अधिकारी भी अपनी रिपोर्टस में उपरोक्त गढ़ों के अस्तित्व की पुष्टी करते हैं।[67] अधिकांश विचारकों तथा इतिहासकारों का यह मत है कि उक्त सूची में वर्णित गढ़ों के आधार पर ही इस क्षेत्र का नाम छत्तीसगढ़ पड़ा होगा। यह अवश्य सत्य है कि गढ़ों की निश्चित संख्या के संबंध में इतिहासकारों एकमत नहीं है किंतु इससे नामकरण का आधार कमजोर होता। वस्तुतः राज्य में प्रचलित मान्यता और

---

65. **रायपुर गजेटियर**, पेज 49
66. **बिलासपुर गजेटियर**, पेज 40
67. **चिशम सेटलमेंट रिपोर्ट**, पेज 47

विशेष अर्थबोध के अनुसार 36 अंक से दो अर्थ ध्वनित होते हैं प्रथम संख्याबोधक तथा द्वितीय प्रमाण बोधक अर्थात बहुत अधिक या आधिक्य के अर्थ में। अतः यह स्पष्ट है कि गढ़ों की संख्या में भले ही मतभेद हो परंतु नामकरण का आधार गढ़ ही है।[68] हैहय राजाओं के काल में गढ़ को पृथक प्रशासनिक इकाई माना जाता था।[69] खल्लारी अभिलेख तथा इलियट की रिपोर्ट से भी यह तथ्य प्रमाणित होता है। इलियट रिपोर्ट में 'बस्तर के राजा भैरवदेव द्वारा अपने छोटे भाई को जीविका हेतु 10 गढ़ देने का उल्लेख है।[70] इसी तरह कालाहांडी राज्य जो पूर्व में करौबद कहलाता था, 18 गढ़ों में विभक्त था।[71] इस तरह गढ़ विभाजन अधिकार क्षेत्र की सीमा निर्धारण तथा प्रशासनिक इकाईयों के उल्लेख वाले ये अभिलेख इस क्षेत्र से संबंधित तत्कालीन गढ़ों की संख्या को बोध कराते हैं। अतः यह माना जा सकता है कि संभवतः हैदृय शासन काल के अंतिम चरण में ही इस क्षेत्र को 'छत्तीसगढ़' विशेषण की पहचान मिल चुकी थी। शिवनाथ के उत्तर में 18 तथा दक्षिण में 18 गढ़ों के प्रांतीय क्रम से भी यही बात प्रमाणित होती है।[72] श्री ब्लंट ने भी इन्हीं गढ़ों व इनके अन्तर्गत 84–84 गांवो की जिक्र किया है। डॉ. हीरालाल ने जिस 'चेदिसगढ़' की कल्पना की है उसमें प्रयुक्त गढ़ शब्द इसी अर्थ से प्रेरित है। छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता राहुल कुमार सिंह का भी मत है कि "छत्तीसगढ़ के नामकरण का आधार तो निःसंदेह रतनपुर राज्य मुख्यालय के अन्तर्गत विभक्त प्रशासनिक इकाईयाँ है। मृतिका दुर्ग या घूलि नाम से अभिज्ञान इन गढ़ों में व्यवस्थित वैज्ञानिक उत्खनन अब तक नहीं हुआ है, इसलिए इनका निलिस्म कायम है लेकिन यह निष्कर्ष सहज ही निकाला जा सकता है कि ऐसे गढ़ लगभग 2700 साल तक पुराने मिट्टी के इन गढ़ों की विशालता और उसके निर्माण में लगे मानवश्रम का अनुमान चकित कर देने वाला है। मल्हार जैसे कुछ गढ़ों से मिलने वाले प्राचीन अवशेष की विपुलता एवं विविधता भी कम आश्चर्यजनक नहीं है। अंचल के ऐसे सभी गढ़ों की प्राचीनता अगर अनुरूप हो तो इनके व्यवस्थित अध्ययन से इतिहास का रोमाचंक पृष्ठ खुल सकता है और अपने अनूठे पन के साथ–साथ इतिहास को सार्थक तथ्य उपलब्ध करा सकता है।[73] अतः यह धारण बनाई जा सकती है कि प्राचीन भारत का कोसल, दक्षिण कोसल, महाकोसल, चेदिगढ़ आदि नामों से चिन्हित भूभाग ही आधुनिक काल में छत्तीसगढ़ कहलाया।

1.5 पृथक संस्कृति

भारत के हृदय में स्थित, मध्यप्रदेश से विघटित होकर निर्मित

---

68. भगवान सिंह वर्मा, **'छत्तीसगढ़ का इतिहास'** 1991 पेज 9
69. **बिलासपुर गजेटियर** पेज 44
70. हीरालाल, **इंसक्रिप्शन इन सी.पी. एण्ड बरार**, पेज 108
71. सिलेक्शन फ्राम रिकार्ड ऑन बस्तर एण्ड करौद डिपेन्डेमीज ऑफ रायपुर डिस्ट्रिक्ट
72. इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया, प्रॉन्विशियल सीरीज पेज 410
73. राहुल कुमार सिंह, **रचना**, लेख, 'छत्तीसगढ़' **छत्तीसगढ़ी और छत्तीसगढ़िया**, नवम्बर–दिसम्बर 2000, पेज 4

छत्तीसगढ़ राज्य यहाँ के नागरिकों की राजनीतिक और आर्थिक ही नहीं सांस्कृतिक आवश्यकता भी थी। प्राचीन काल से ही भौगोलिक परिपूर्णता छत्तीसगढ़ को स्वतंत्र राज्य का दर्जा नहीं दिलाती वरन् इस क्षेत्र की संस्कृति के विविध पक्षों में इतनी अधिक पूर्णता: तथा कलागत सौन्दर्य का भाव है कि ये सारी अनूठी विशेषताऐं इस क्षेत्र को सहज ही देश के मानचित्र में पृथक गौरवपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित करने में सक्षम हैं।

भारत दुनिया का सबसे अधिक सांस्कृतिक विभिन्नताओं वाला देश है यहाँ की विवधता भी इसकी एकता के रास्ते में कभी बाधा नहीं बनी। यहाँ कि आंचलिक सांस्कृतिक पहचान का विकास अखिल भारतीय पहचान के विरोधी के रूप में नहीं बल्कि उसके अंग के रूप में होता रहा है। प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने 1957 में लिखा भी है – "हमें यह याद रखना होगा कि भारत विभिन्न संस्कृतियों, आदतों, रिवाजों और जीवन शैलियों का देश हैं मुझे लगता है हम सब लोगों के लिए यह याद रखना जरूरी है कि हमारे इस विलक्षण देश में अनंत विभिन्नताऐं हैं और इसे एक ही रूप में जबर्दस्ती ढालने का बिल्कुल कोई कारण ही नहीं है। सच्चाई तो यह है कि अंततः यह असंभव भी है।[74]

दीर्घकालीन विचार–विमर्श, चिंतन–मनन एवं अत्यधिक सावधानी के पश्चात 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर भाषाई राज्यों का निर्माण किया गया। तमाम राज्यों के गठन के पश्चात् मध्यभारत का वह क्षेत्र जो किसी भाषाई राज्य का हिस्सा नहीं बन सका उसे मध्यप्रदेश का नाम दिया गया। छत्तीसगढ़ का राजनैतिक नेतृत्व शेष मध्यप्रदेश की संस्कृति से छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक पार्थक्य की दुहाई देता ही रह गया किंतु फजल अली आयोग उनकी मांगों पर मौन ही रहा परिणाम स्वरूप एक लंबे समय तक छत्तीसगढ़ की अनूठी सांस्कृतिक विशेषताओं को मुखर होने के सीमित अवसर ही प्राप्त हो सके।

हमें इस सत्य को स्वीकारना होगा कि छत्तीसगढ़ का इतिहास, उसकी भाषा, रीतिरिवाज, सामाजिक परम्पराऐं, धार्मिक मान्यताऐं, लोककला का असीम संसार अपने आप में इतना विशिष्ट है कि शेष मध्यप्रदेश से उसकी साम्यता स्थापित कर सकना लगभग असंभव कार्य है। छत्तीसगढ़ के इसी पृथक चरित्र को उद्घाटित करते हुए इतिहासकार सी.यू. विल्स लिखते हैं – विशिष्ट बोली, पहिनावे और व्यवहार वाले इस क्षेत्र के निवासियों की अपनी विशिष्टताएँ हैं। अन्य प्रदेशों की अपेक्षा उनमें अधिक समानता है और उनका राजनीतिक इतिहास भी स्वतंत्र रूप से विकसित हुआ है।[75]

छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक वैभव का सर्वाधिक महत्वपुर्ण पक्ष है समन्वय् और सहअस्तित्त्व। सामाजिक समभाव की सनातन धारा यहाँ अनादि काल से

---

74. पं. जवाहर लाल नेहरू , **'लेटर्स टू द चीफ मिनिस्टर्स**, 1947–64, नई दिल्ली, खण्ड–2, पेज 352
75. सी.यू.विल्स **"द टेरीटोरियल सिस्टम आफ द राजपूत किंगडम आफ मेडीवल छत्तीसगढ़"** 1919 पेज 197

बहती आई है। रायपुर और बिलासपुर के गजेटियर के अनुसार छत्तीसगढ़ अनेक सांस्कृतिक सामाजिक सुधार, अभियानों का केन्द्र रहा है। कबीरपंथ, सतनाम आंदोलन एवं महाप्रभु वल्लभाचार्य के वैष्णव सम्प्रदाय ने छत्तीसगढ़ में समता और सदभाव की जो आधार भूमि तैयार की वह ऊँच नीच छुआछुत के विरूद्ध एक सार्थक अभियान के लिए प्रेरक बनी।[76] पंडित सुन्दरलाल शर्मा के नेतृत्व में सदियों पश्चात् मंदिरों के द्वार दलितों के लिए न केवल खोल दिये गये बल्कि उनके सामूहिक यतोपवीत संस्कार भी आयोजित किये गये। राष्ट्रपिता माहात्मा गांधी ने छत्तीसगढ़ प्रवास में इन महान कार्यों के आयोजन को देखकर कहा था – "जिस हरिजन उद्धार के लिए मैं देश में काम कर रहा हूँ उसे आप यहाँ शुरू कर चुके हैं। इस मामले में आपको गुरू मानता हूँ।"

बिलासा केवटिन, राजिम तेलिन, बहादुर कलारिन, किरवई, की धोबिन, गंगा ग्वालिन, मुरहा राऊत, तथा परऊ बैगा जैसे लोक चरित्रों की प्रतिष्ठा तथा उनके प्रति सम्मान प्रगट कर गौरव बोध होना अंचल की सामाजिक समरसता का द्योतक है। यह अंचल की ही संस्कृति है कि गांव के दो समान नाम वाले व्यक्ति जाति, वर्ग, धर्म, भेद,से परे मितान बन जाते हैं। छह सौ वर्ष पूर्व खल्लारी में देवपाल मोची द्वारा मंदिर निर्माण करवाना और इस कार्य में राजा ब्राम्हण एवं कायस्थों द्वारा सहयोग प्रदान करना छत्तीसगढ़ संस्कृति के अशेष अंग है।

साहित्य सृजन की भी छत्तीसगढ़ में एक समृद्ध एवं विशिष्ट परम्परा रही है। दक्षिण कोसल की राजधानी श्रीपुर संस्कृत के विद्वानों का केन्द्र थी। कविराज ईशान, कविकुलगुरू भास्कर भट्ट और श्री कृष्ण दण्डी के नाम उल्लेखनीय है। गंगाधर मिश्र का कोसलानंदकाव्य, रतनपुर के तेजनाथ शास्त्री का 'रामायण सारसंग्रह, रेवाराम बाबू के गीत माधव, गंगा लहरी, नर्मदा लहरी, आदि संस्कृत के महान ग्रंथ लिखे गये हैं। संत साहित्य परम्परा में मछन्दरनाथ, स्वामी रामानंदजी, स्वामी दयानंद जी तथा अनेक कबीरपंथी व सतनाम पंथी संत हुए तो चारण साहित्य में दलरामाराव, दलवीरराव आदि लोकख्यात हुए। मध्ययुगीन साहित्य में गोपाल चन्द्र द्वारा लिखित 'खूबतमाशा, जैमिनी, अश्वमेध, सुदामा चरित आदि को भी बहुत मान मिला। आधुनिक काल में ठाकुर जगमोहन सिंह, जगन्नाथ प्रसाद, पंडित मालिकराम त्रिवेदी, रायगढ़ के अनंत राम पाण्डेय,बालपुर के पुरूषोत्तम पाण्डेय, पेंड्रा के रामाराव चिंचोलकर, पं.लोचनप्रसाद पाण्डेय, पं. मुकुरधर पाण्डेय, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, माधवराव सप्रे, रघुवीर प्रसाद, बैरिस्टर छेदीलाल, मुक्तिबोध, श्रीकांत वर्मा जैसे श्रेष्ठ रचनाकारों ने प्रदेश को ही नहीं देशज साहित्य को अमर कृतियाँ प्रदान की।

एक व्यापक अर्थ में छत्तीसगढ़ हिंदी भाषी राज्य है और प्रायः छत्तीसगढ़ी के रूप में व्यवहत हिंदी इस प्रदेश की जनता की शिक्षा, पत्रव्यवहार एवं पठन की

---

76. रमेश नैय्यर, लेख – **छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत, 'छत्तीसगढ़ की अस्मिता'** 2002, पेज 401

भाषा है, जो देवनागरी लिपि में लिखित और मुद्रित की जाती है। छत्तीसगढ़ी का प्रथम अभिलेख संवत 1760 यानि सन् 1703 का दंतेवाड़ा के शासक दिकपाल देव का है। छत्तीसगढ़ के प्राचीन इतिहास में अक्षरों की अपनी कहानी है। उत्कीर्ण लिपियों का अपना रहस्य है। रामगढ़, गुंजी, किरारी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। इस सन्दर्भ में चन्द्रपुर से प्राप्त लगभग दो हजार वर्ष प्राचीन सुतनुका देवदासी और देवदीन मूर्तिकार का अभिलिखित काष्टलेख अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी तरह आंचलिक सीमा से संलग्न विक्रम खोल का चट्टान लेख हड़प्पा कालीन संकेतो और ब्राम्हीलिपि के बीच की कड़ी माने जाने के कारण अत्यधिक अनूठा प्रमाण है।[77]

छत्तीसगढ़ विविध कलाओं का संसार भी अत्यंत व्यापक है। प्रदेश की भूमि में मूर्तिकला,चित्रकला, नृत्य संगीत जैसी अविधाओं के अनन्य साधकों ने जन्म लेकर इन कलाओं को समृद्ध किया। साथ ही ग्रामीण अंचलो में बसे जनपदीय और जनजातिय लोकमानस ने लोककलाओं, लोकनृत्यों एवं लोकनाट्यों के माध्यम से अपनी कलात्मक अभिरूचि का निरन्तर परिषकार किया।

छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक जीवन में प्रत्येक शुभ कार्य गायन वादन से आरंभ होता है। अंचल सदैव ही संगीत साधको की कर्मभूमि रहा है। तबला वादन में निपुण रायगढ़ के राजा चक्रधर सिंह के शासन काल में शासकीय प्रोत्साहान से कार्तिक तथा कल्याण जैसे अनेक राष्ट्र स्तरीय कलाकारों तथा तालतोय निधि तथा रागरत्नाकर आदि महान ग्रंथों की रचना हुई। अंचल के महान संगीतज्ञों में मृंदगाचार्य, मानसिंह, (ध्रुपद तथा धमार के विशेषज्ञ) सांरगीवादक अमरसिंह, ठुमरी वादन में तुलसी दास, तबलावाद में रामभरोद पोद्दार, महंत पुरूषोत्तमदास आदि प्रसिद्ध थे। इसी तरह रायपुर के भैरो प्रसाद श्रीवास्तव, नारायण स्वामी पिल्ले, विष्णुकृष्ण जोशी, अरूण कुमार सेन, दुर्ग के सुप्रसिद्ध तबला वादक सिद्धिनाथ, राजनांदगांव के सितार वादन और ध्रुपद गायन के महान कलाकार भोंदुदास बैरागी, खैरागढ़ के राजा तथा पखापज और गायन के निष्णात कलाकार कमलनारायण सिंह तथा यहा की रानी पद्मावती के महान कला प्रेम की अभिव्यक्ति खैरागढ़ में संगीत विश्वविद्यलाय के रूप में चिरस्थायी है।

अन्य कलाओं की भांति चित्रकला भी आंचालिक जीवन का अंग रही है। ग्रामीण आदिवासीयों के घर तो मानों लोककला का जीवन्त स्वरूप है। गणेशराम मिश्र छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध कलाकार है। धमतरी के लक्ष्मीनारायण पचौरी भी प्रदेश के प्रारंभिक नामवंत कलाकरों में से थे। जिन्होंने चित्रांकन की शांतिनिकेतन शैली से अंचल का परिचय कराया।

नृत्य के क्षेत्र में रायगढ़ धराने का कत्थक के क्षेत्र में गौरवपूर्ण स्थान है। इस नृत्य शैली को महिमामण्डित करने का श्रेय रायगढ़ नरेश चक्रधर सिंह को

---

77. डॉ. हीरालाल, **'छत्तीसगढ़ ज्ञान कोष'**, 2004, पेज 130

प्राप्त होता है। इस धराने के नृत्याचार्य कार्तिकराम, कल्याणदास और फिरतू महाराज की उपलब्धियाँ छत्तीसगढ़ को गौरव प्रसाद करती है।

छत्तीसगढ़ में रंगकर्म का इतिहास मौर्यकाल में निर्मित रायगढ़ पहाड़ी की जोगीमाड़ा गुफा में अवस्थित विश्व की प्राचीनतम नाट्यशाला से होता है। अंचल में एक ओर 1943 –44 में हबीब तनवीर द्वारा स्थापित आदर्शों को रचा वहीं दूसरी ओर ग्रामीण अंचलो में लोकनाट्य धारा तेजी से लोकप्रिय होती चली गई । नाचा, रहस, दहिकाँदो, गम्मत, मावोपारा, खम्बस्वाँग, भतरानाट आदि नाट्य शैलिया भिन्न–भिन्न विषयों पर केंद्रित होती है। तथा आंचलिक विश्वासों मान्यताओं और परम्पराओं का श्रेष्ठ प्रतिनिधित्व भी करती है।

छत्तीसगढ़ की शिल्प संस्कृति विराट और गरिमामयी है। प्रागैतिहासिक काल से ईसा की तेरहवीं शताब्दी तक की जो कलाकृतियाँ उपलब्ध हुई है उनसे यह सिद्ध होता है कि शिल्प और कलात्मक सृष्टी की दृष्टि से यह प्रदेश ऐश्वर्य मंडित है। उसी तरह छत्तीसगढ़ी लोककला का संसार भी अत्यंत व्यापक है। करमा, पंथी, राऊत, सैला, परधोनी, बिमला, फाग, थापटी, गेंडी, गँवर, दोरला, सरहुल, कोलदहका, ककसार आदि नृत्य विधाओं तथा ददरिया, भरथरी, पंडवानी तथा बॉस गीत गायन की ऐसी अदभूत विधायें हैं जिनका कोई समकक्षता देश के दूसरे प्रदेशों में प्राप्त नहीं होती।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि इतिहास, संस्कृति , सभ्यता तथा कला की दृष्टि से छत्तीसगढ़ अपनी विशिष्टता प्राचीन काल से ही बनाये हुए हैं। अतः मध्यप्रदेश से अलग होकर पृथक राज्य के रूप में अपने अस्तीत्त्व की स्थापना का प्रयास स्वाभाविक ही था।

❖❖❖❖